प्रस्तावना

जब नए नियम के लेखक कलीसिया स्थापित करते थे, तो उन्हें त्याग नहीं देते थे। पौलुस और उसके साथियों को, जिन्होंने थिस्सलुनीकियों में कलीसिया की स्थापना की थी, सताव के कारण उस युवा कलीसिया को छोड़ के जाना पड़ा (प्रेरितों 17:1–10)। उनके जाने के कुछ ही महीनों के पश्चात, उस युवा कलीसिया के लिए दो पत्रियाँ लिखी गईं, उनके सदस्यों को प्रोत्साहित एवं परिपक्व करने के लिए। दूसरी पत्री वह है जिसे हम 2 थिस्सलुनीकियों कहते हैं।

लेखक

आंतरिक प्रमाण

पत्री इस पुष्टीकरण के साथ आरंभ होती है कि वह “पौलुस और सिलवानुस और तीमुथियुस की ओर से” है। इसी पत्री के 3:17 में पौलुस के लेखक होने की पुनः पुष्टि, इन शब्दों द्वारा होती है : “मैं, पौलुस, अपने हाथ से नमस्कार लिखता हूँ।” इसके अतिरिक्त, लिखने की शैली तथा शब्दावली पौलुस की अन्य पत्रियों के समान है।

दोनों, 1 और 2 थिस्सलुनीकियों की आरंभिक आयतें में पौलुस और सिलवानुस और तीमुथियुस का उल्लेख है। दोनों ही पत्रियों में प्रथम व्यक्ति बहुवचन सर्वनाम, “ह” का सारी पत्री में प्रयोग हुआ है। ये प्रमाण प्रेरितों की ऐतिहासिक जानकारी से मेल खाते हैं जिससे संकेत मिलता है कि सीलास (सिलवानुस का लघु रूप) ने थिस्सलुनीकियों की मण्डली की स्थापना में पौलुस की सहायता की (देखें प्रेरितों 17:4)।

बाहरी प्रमाण

पौलुस का 2 थिस्सलुनीकियों का लेखक होने का समर्थन पत्री के बाहर के प्रेरणा रहित स्रोतों से भी प्राप्त होते हैं। इस पत्री का बाहरी प्रमाण 1 थिस्सलुनीकियों के प्रमाण से भी अधिक बलवन्त है।

अनेक प्राचीन गवाह पौलुस के 2 थिस्सलुनीकियों का लेखक होने की पुष्टि करते हैं। एशिया माइनर के पोलीकार्प (ईस्वी 135) ने इसे उद्धृत किया और साथ ही पौलुस का उल्लेख किया। मार्सियोन्स कैनन (परमेश्वर की प्रेरणा से

लिखी गई पुस्तकों की एक सूची; ईस्वी 140) में यह सम्मिलित है। मुराटोरियन फ्रैगमेन्ट (ईस्वी 170) में भी 2 थिस्सलुनीकियों मिलता है। आईरीनियस (ईस्वी 180) ने नाम के द्वारा इसका उल्लेख किया और इसे पौलुस का कहा। ऐलिक्ज़ैन्ड्रिया के क्लेमेन्ट (ईस्वी 190) ने 2 थिस्सलुनीकियों 3:1, 2 को उद्‌धृत किया।[1]

उपरोक्त प्रमाणों के होने पर भी, पौलुस के लेखक होने के विरुद्ध आपत्तियाँ उठाई गई हैं। रॉबर्ट एल. थॉमस ने इन में से तीन को सूचीबद्ध किया।[2]

1. *इसके परलोक संबंधित सिद्धांत 1 थिस्सलुनीकियों से भिन्न हैं।* कहा जाता है कि, दूसरे थिस्सलुनीकियों में *पैरोसिया* (मसीह के दूसरे आगमन) से पहले के बहुत से भावी सूचक चिन्ह हैं, जब कि 1 थिस्सलुनीकियों में प्रतीत होता है कि यह बस अब होने ही वाला है। परन्तु, जैसे कि हम देखेंगे, जब हम 2 थिस्सलुनीकियों की व्याख्या करते हैं, प्रतीत होने वाले यह अन्तर समाप्त हो जाते हैं। थिस्सलुनीकियों में विद्यमान भिन्न परिस्थितियाँ, भिन्न बातों पर बल दिए जाने की माँग करती हैं, परन्तु 1 थिस्सलुनीकियों में दिए गए *पैरोसिया* के चित्रण का कोई भी वर्णन इस संबंध में 2 थिस्सलुनीकियों में कही गई किसी बात का खण्डन नहीं करता।

2. *अन्तिम न्याय के बारे में इसमें दिया गया पौलुस का दृष्टिकोण, उसके द्वारा लिखी गई अन्य लेखों से भिन्न प्रतीत होता है।* जो इसे कठिनाई की पुष्टि मान कर चलते हैं वे 1 अध्याय में परिणाम के उलट हो जाने पर ध्यान देते हैं जहाँ सताने वालों को दण्ड मिलता है और सताए गए लोगों को मुक्ति (1:5–10)। आलोचकों का कहना है कि इस प्रकार की शिक्षा बाद की पीढ़ियों में देखने को मिलती है। ऐसे तर्क यह मान कर चलते हैं कि पौलुस (पवित्र आत्मा के मार्गदर्शन से) अपने द्वारा दिए गए परलोक संबंधित सिद्धांतों में कुछ अन्य आयाम नहीं जोड़ सकता। ये जोड़े गए "अन्य आयाम" पौलुस द्वारा पहले कही गई किसी बात का खण्डन नहीं करते हैं; वे केवल उनमें और विस्तार करते हैं तथा चित्र को और अधिक पूर्ण बताने में सहायक होते हैं।

जैसे-जैसे थिस्सलुनीकियों के मसीहियों को और अधिक सताव का सामना करना पड़ा (जो 2 थिस्सलुनीकियों में प्रगट है), उन्हें और अधिक आश्वासन की आवश्यकता थी कि एक दिन वे भी "मुक्ति" पाएंगे। ऐसे प्रमाण हैं (ऊपर दिए गए) कि यह प्रथम शताब्दी के मध्य काल की पत्री है, और इसमें एक खण्ड है जिसमें सताने वालों को दण्ड मिलता है और सताए गए मुक्ति पाते हैं। ऐसा कोई कारण नहीं है जिसके अन्तर्गत इस शिक्षा को बाद की पीढ़ियों के लिए सीमित किया जाए।

डॉक्ट्रिन पवित्रशास्त्र में अन्य स्थान पर भी मिलती है। यह इस पत्री से भी दशकों पहले यीशु के मुख से निकली (लूका 16:25; मत्ती 25:31–46)। यशायाह ने इसे मसीह से सात सौ वर्ष पहले सिखाया था (यशायाह 66:15–

24)। पौलुस ने भी यही बात रोमियों 2:5–10 में सिखाई। इसलिए यह तर्क अवैध है।

3. *मसीह के बारे में इसका दृष्टिकोण, जिसमें उन्हें ईश्वरीय गुण और कार्य प्रदान किए गए हैं, ऐसा दृष्टिकोण है जो पौलुस के समय के उपरान्त विकसित हुआ।* ऐसी आपत्तियाँ 2 थिस्सलुनीकियों 2:16 जैसे परिच्छेदों पर आधारित हैं, जिनमें कहा गया है "हमारा प्रभु यीशु मसीह आप ही, और हमारा पिता परमेश्वर, जिसने हम से प्रेम रखा और अनुग्रह से अनन्त शान्ति और उत्तम आशा दी है।" ऐसी आपत्तियों द्वारा उठाई जाने वाली समस्या है कि मसीह ना केवल यहाँ ईश्वरीय है, वरन उसका उल्लेख पिता से भी पहले किया गया है, जो उनके 1 थिस्सलुनीकियों 3:11 में दिखाए ऐसे ही संबंध के विपरीत है, जहाँ पिता का उल्लेख पहले किया गया है। यह आपत्तियाँ कहती हैं कि "यीशु को ऐसी महिमा देना, पौलुस के काल के बाद की बात है।" परन्तु 1 थिस्सलुनीकियों में भी मसीह को ईश्वरीय प्रस्तुत किया गया है (1:1; 2:14; 3:11, 12; 5:28)। एक बार जब दोनों को ईश्वरीय स्वीकार कर लिया गया, तो इससे कुछ अन्तर नहीं पड़ता है कि किसका उल्लेख पहले किया जाता है। 2:16, 17 के संदर्भ में, जहाँ पौलुस प्रार्थना कर रहा है कि उनके मन ढाढ़स और बल पाएं, यीशु को पहले संबोधित करना उचित प्रतीत होता है क्योंकि वही "परमेश्वर और मनुष्यों के बीच में भी एक ही मध्यस्थ है" (1 तीमुथियुस 2:5)। इस कारण, जैसे थॉमस ने कहा, "आन्तरिक बातों पर आधारित इनमें से कोई भी तर्क पर्याप्त नहीं है कि पत्री के स्वयंभू दावों और दृढ़ता से पुष्टि करे गए पौलुस के लेखक होने के पारंपरिक दृष्टिकोण को हटा सके।"[3]

लिखने का अवसर, समय, और स्थान

जैसा 1 थिस्सलुनीकियों की प्रस्तावना में लिखा गया, पौलुस ने थिस्सलुनीकियों की कलीसिया को 50 ईस्वी के बाद के भाग या 51 के आरंभिक भाग में स्थापित किया। उसने 1 थिस्सलुनीकियों को कुरिन्थुस से 51 के बाद के भाग में लिखा। वह कुरिन्थुस में लगभग दो वर्ष रहा (प्रेरितों 18:11), और जब वह वहाँ था, तो तीमुथियुस और सीलास उसके साथ थे। तीमुथियुस, फिर, पौलुस के साथ इफिसुस को चला गया, परन्तु सीलास कुरिन्थुस और इफिसुस के मध्य कहीं चित्र से बाहर हो गया। हमारे पास कोई ऐसा लिखित अभिलेख नहीं है कि इसके बाद ये तीनों कभी एक साथ हुए। जब 2 थिस्सलुनीकियों लिखा गया, ये एक साथ थे, और इससे यह गहरी संभावना बनती है कि इसे कुरिन्थुस से लिखा गया।

पहली पत्री को तीमुथियुस के थिस्सलुनीकियों से आने के तुरंत बाद कुरिन्थुस से लिखा गया (1 थिस्सलुनीकियों 3:1–8)। प्रकटतः, पहली के

लिखने के शीघ्र बाद ही, पौलुस को मण्डली में होने वाली समस्याओं के बारे में "सुनाई" देने लगा (2 थिस्सलुनीकियों 3:11), इसलिए उसने दूसरी बार लिखा। जिन समस्याओं को संबोधित किया गया है वे कुछ भिन्न हैं, परन्तु दूसरे आगमन से संबंधित हैं, जो इस निष्कर्ष की पुष्टि करता है कि इसे पहली के शीघ्र बाद ही लिखा गया। इसलिए यह संभव प्रतीत होता है कि यह दूसरी पत्री ईस्वी 52 में, पहली पत्री के छः माह से भी पहले या बाद में लिखी गई।

हम नहीं जानते कि पौलुस ने मण्डली में चल रही समस्याओं के बारे में कैसे सुना (3:11)। हो सकता है कि उसने कुरिन्थुस, जो एक बड़ा औद्योगिक केंद्र था, से होकर जाने वाले थिस्सलुनीकियों के किसी यात्री से इनके बारे में सुना हो।

उद्देश्य और विषय-वस्तु

पौलुस द्वारा पहली पत्री में किए गए अपनी सत्यनिष्ठा के बचाव को स्वीकार कर लिया गया था (1 थिस्सलुनीकियों 2:1–4)। वास्तव में, दूसरी पत्री में वह ऐसी कोई बात नहीं दोहराता है। साथ ही, ऐसा प्रतीत होता है कि, अधिकांश विश्वास में बने रहे थे जैसा कि उसने उन्हें करने के लिए चिताया था (1 थिस्सलुनीकियों 5:1–11)।

मसीह के दूसरे आगमन के विषय में थिस्सलुनीकियों के भ्रम को सुधारने में वह कम सफल रहा था। यद्यपि उसने कुछ बातों को तो स्पष्ट कर दिया था, प्रकटतः उन्होंने पहली पत्री के कुछ भाग को सही नहीं समझा था। गलत शिक्षक पौलुस के कथनों का दुरुपयोग कर रहे थे। ऐसा प्रतीत होता है कि कुछ तो यह शिक्षा दे रहे थे कि प्रभु का दिन आ भी चुका है (2 थिस्सलुनीकियों 2:1–3), और वे दावा करते थे कि पौलुस ने इसी आशय से लिखा था। इसीलिए, पौलुस ने अपनी शिक्षाओं को पुनः समझाने के लिए यह पत्री लिखी। इस पत्री के उद्देश्य हैं ...

- दूसरे आगमन से संबंधित बातों को स्पष्ट करना। पौलुस के नाम से लिखी गई एक बनावटी पत्री ने मुद्दे को जटिल बना दिया था (देखें 2:2)।
- उन्हें यह बताने के लिए कि जो काम करने के बारे में उसके निर्देशों का पालन नहीं करते हैं उनके साथ कैसा बर्ताव किया जाए। परिस्थिति 1 थिस्सलुनीकियों के लिखे जाने के बाद से और बिगड़ गई थी।
- विश्वासियों को और प्रोत्साहित करने के लिए क्योंकि अत्याचार और अधिक बढ़ गया था।

पत्री के प्रमुख विषय-वस्तु पहली पत्री के लिए सूचीबद्ध के समान ही हैं : एक सच्चा परमेश्वर तीन व्यक्तियों में (1:1, 2; 2:13, 14), मसीह का ईश्वरत्व (2:16, 17), पवित्र-शास्त्र का परमेश्वर की प्रेरणा से होना (3:6, 15), क्रूस पर आधारित उद्धार (2:13, 14), मसीही कार्य नीति (3:6–15), और प्रार्थना का मूल्य (1:11; 2:16, 17; 3:5, 16)।

रूपरेखा[4]

- I. प्रोत्साहन (अध्याय 1)
  - A. अभिनंदन (1:1, 2)
  - B. थिस्सलुनीकियों की दृढ़ता के लिए कृतज्ञता (1:3, 4)
  - C. परमेश्वर द्वारा धार्मिकता से न्याय और मसीह का दूसरा आगमन (1:5–10)
  - D. प्रार्थना (1:11, 12)

- II. शिक्षा (अध्याय 2)
  - A. मसीह का दूसरा आगमन (2:1–12)
    - 1. उसका दूसरा आगमन अभी नहीं हुआ (2:1, 2)
    - 2. उसके दूसरे आगमन से पूर्व घटित होने वाली घटनाएं (2:3–12)
  - B. धन्यवाद और चेतावनी (2:13–15)
  - C. थिस्सलुनीकियों के लिए प्रार्थना (2:16, 17)

- III. झिड़की (अध्याय 3)
  - A. पौलुस और उसके सहकर्मियों के लिए प्रार्थना का निवेदन (3:1, 2)
  - B. प्रभु तथा थिस्सलुनीकियों में विश्वास का कथन (3:3–5)
  - C. अनुशासनहीन सदस्यों के प्रति बर्ताव संबंधी आज्ञाएं (3:6–15)
  - D. निष्कर्ष (3:16–18)

अनुप्रयोग

शिक्षको, शिक्षा देते रहो!

पौलुस ने आशा की होगी कि परमेश्वर से प्रेरित 1 थिस्सलुनीकियों के सन्देश से थिस्सलुनीकियों के मसीहियों की समस्याओं और परीक्षाओं का समाधान हो जाएगा। परन्तु ऐसा नहीं हुआ। प्रकटतः, कुछ माह पश्चात, कुछ समस्याएं अभी भी शेष थीं, और नई समस्याएं भी आ गई थीं!

शिक्षकों ने क्या किया? क्या उन्होंने ऐसे अपरिपक्व भाइयों से अपने हाथों

को खींच लिया? क्या उन्होंने इन युवा भाइयों की भर्त्सना की क्योंकि उन में से कुछ भ्रान्ति में थे या कुछ अत्याचार की तीव्रता के कारण मुरझा रहे थे? क्या उन्होंने यह कहा कि चिन्ता नहीं करें, अपनी अपरिपक्क स्थिति में बने रहें?

नहीं! उन्होंने ऐसा कुछ भी नहीं किया। उन्होंने इन संघर्ष कर रहे भाइयों को परामर्श, स्पष्टीकरण, चेतावनी, और प्रोत्साहन के लिए एक और पत्री भेजी। उनका मानना था कि इन युवा मसीहियों को शिक्षा दी जानी चाहिए, और पौलुस, सीलास, और तीमुथियुस उन्हें शिक्षा देना चाहते थे। यह पत्री हमारे लिए पाठ है कि शिक्षा देने, प्रोत्साहित करने, और संपर्क बनाए रखने में लगे रहें, चाहे उनके जीवनों में कठिनाइयाँ बनी हुई हों या नई समस्याएं आएं। जो कठिनाइयों का सामना कर रहे हैं हम उनकी सहायता कैसे कर सकते हैं?

परमेश्वर के वचन को समझाने में धीरजवन्त हों। हम समझते हैं क्योंकि हमने कोई पाठ सिखाया है इसलिए हमारे आस-पास के सभी लोग उसे समझते हैं, उस पर विश्वास करते हैं, उसे स्मरण रखते हैं, और उसका पालन भी करेंगे। ऐसा नहीं है। अधिकांश लोगों के लिए वास्तविक और स्थायी परिवर्तन ला पाना कठिन होता है। क्षमता, सहमति, ज्ञान, प्रतिभा, सामाजिक एवं पारिवारिक वातावरण, और अन्य कारणों से निःसंदेह परिवर्तन बाधित हो सकता है। निर्देश सुनने से लेकर उसे व्यवहार में लाने तक के मार्ग के प्रत्येक पग पर, आज्ञाकारिता की प्रक्रिया पटरी से उतर सकती है।

परिणामस्वरूप, लोगों को धैर्य के साथ बाइबल के नियमों का समझाया जाना आवश्यक है जब तक कि जो शिक्षा दी जा रही है उसे वे पूर्णतया न समझ लें। उनके प्रश्नों के उत्तर दिए जाने चाहिए और उस विषय को लेकर उनके भ्रम सही किए जाने चाहिए। जो शब्द प्रयोग किए गए हैं, जिस प्रकार से उन्हें कहा गया है, जो चित्रण किए गए हैं, जो उदाहरण दिए गए हैं वे एक व्यक्ति के परमेश्वर की इच्छा को समझने की क्षमता में वृद्धि या बाधा ला सकते हैं।

यह इतना महत्वपूर्ण क्यों है? क्योंकि आत्माओं का उद्धार दाँव पर है! तीमुथियुस से कहा गया, “अपनी और अपने उपदेश की चौकसी रख। इन बातों पर स्थिर रह, क्योंकि यदि ऐसा करता रहेगा, तो तू अपने, और अपने सुनने वालों के लिये भी उद्धार का कारण होगा” (1 तीमुथियुस 4:16)। उसे लोगों की उनकी आत्माओं के उद्धार के लिए सहायता करने में सावधान, संपूर्ण, और सुसंगत होना था।

परामर्श की पुनः आवृत्ति करने के लिए तत्पर हों। चाहे लोग किसी धारणा को पूरी रीति से समझ लें और उस पर विश्वास भी करें, तो भी इसका यह अर्थ नहीं होता है कि वे उसे स्मरण रखेंगे तथा उसका पालन करेंगे। किसी शिक्षा को समझने और उससे सहमत होने के बाद भी, लोग उसे अपनी परिस्थिति पर लागू करना भूल जाते हैं। जो हम कह रहे हैं, उस शिक्षा को पूर्णतः प्रभावी होने के लिए, हमें उसे बार-बार कहने की आवश्यकता हो सकती है, संभवतः

सप्ताहों या वर्षों तक।

प्रथम शताब्दी के मसीहियों से जिन्होंने यीशु की शिक्षाओं को प्रेरितों से सुना था, कहा गया, “पर हे प्रियो, तुम उन बातों को स्मरण रखो; जो हमारे प्रभु यीशु मसीह के प्रेरित पहिले कह चुके हैं” (यहूदा 17); “कि तुम उन बातों को, जो पवित्र भविष्यद्वक्ताओं ने पहिले से कही हैं और प्रभु, और उद्धारकर्ता की उस आज्ञा को स्मरण करो, जो तुम्हारे प्रेरितों के द्वारा दी गई थी” (2 पतरस 3:2)।

जिन्होंने शिक्षा को प्राप्त कर लिया था, उन मसीहियों को भी, जो उन्होंने सीख लिया था स्मरण करवाया गया : “... वे ही बातें तुम को बार-बार लिखने में मुझे तो कोई कष्ट नहीं होता, और इस में तुम्हारी कुशलता है” (फिलिप्पियों 3:1); “मैं यह अपने लिये उचित समझता हूं, कि ... तुम्हें ुधि दिला दिलाकर उभारता रहूं” (2 पतरस 3:1)।

क्या थिस्सलुनीकियों को मसीह के दोबारा आने के विषय *पुनः* बताने की आवश्यकता थी? क्या उन्हें तत्पर कार्यकर्ता होने के लिए *पुनः* प्रोत्साहित किए जाने की आवश्यकता थी? क्या सताव को सहने के लिए उन्हें *और* प्रोत्साहन देने की आवश्यकता थी? इन प्रत्येक परिस्थितियों का उत्तर हाँ है, इसीलिए इस दूसरी पत्री में परमेश्वर के निर्देशों की पुनः आवृत्ति हुई तथा उन्हें समझाया गया। उसकी शिक्षाएं दोहराए जाने के योग्य हैं!

हमें यह कभी नहीं मान लेना चाहिए कि पहले के पाठ स्मरण कर लिए गए हैं या यह मान कर नहीं चलना चाहिए कि लोग विश्वास के मूल सिद्धांतों मानते ही हैं। परमेश्वर के निर्देशों को उनके जीवनों के लिए उन्हें बारंबार देने के लिए हमें कभी क्षमा प्रार्थी नहीं होना चाहिए!

भाइयों को प्रोत्साहित करने में नम्र रहें। कई बार शिक्षक परमेश्वर की इच्छा को सीखने और मानने में आने वाली कठिनाइयों के प्रति कठोर रवैया रखना चाहते हैं। हम कहते हैं या फिर कम से कम इस आकलन को दिखा देते हैं कि जिन्हें हम सिखाना चाह रहे हैं वे “निकम्मे” हैं। बहुधा यह उनके ढीठ होने के स्थान पर स्वयं हमारे ही अधीर होने का सूचक होता है।

हमें प्रत्येक मित्र तथा विद्यार्थी में अधिक से अधिक संभावना को देखना तथा प्रोत्साहित करना चाहिए। किसी प्रभाव के विदित होने में कई सप्ताह, माह, या वर्ष लग सकते हैं। थिस्सलुनीके की कलीसिया को यह दूसरी पत्री, और पहली भी, प्रगट करती है कि शिक्षकों को उन मसीहियों में संभावनाएं दिखाई दीं।

“आप कर सकते है”; “हमें निश्चय है कि आप दृढ़ रहेंगे”; और “हमें विश्वास है कि आप सफल होंगे” सभी 3:4 के समान परिच्छेद के भाव को व्यक्त करने की विधियाँ हैं। हमारे, और जिन्हें हम परमेश्वर की इच्छा के विषय में सिखाना चाह रहे हैं, उनके मध्य प्रोत्साहित करने वाला संबंध होना सदा ही सहायक

होता है। हमें ऐसी प्रोत्साहित करने वाली भाषा को विकसित करने का प्रयास करना चाहिए, जिससे वे परमेश्वर द्वारा उन्हें प्रदान की गई संभावनाओं को पहचान सकें और परमेश्वर की सहायता से उन के अनुकूल जीवन जीने की चेष्टा करें।

उपसंहार। यदि एक प्रेरित से हमें कोई पत्री मिलती – ऐसा प्रेरित जिसके विषय में हम जानते हैं कि वह प्रोत्साहित करने वाला भाई है, हम निश्चय ही उसे पढ़ेंगे। हम उसे संभाल कर रखेंगे और उसमें दिए गए परामर्श का पालन करेंगे।

एक प्रकार से हमारे पास ऐसी अनेक पत्रियाँ हैं। इनमें से दो को थिस्सलुनीके के मसीहियों को लिखा गया, परन्तु हमारे लिए भी वे उतनी ही महत्वपूर्ण हैं। उन्हें संरक्षित करके रखा गया है जिससे कि हम यीशु का अनुसरण करते रहें, चाहे परिस्थितियाँ कैसी भी हों। हम उन्हें बहुमूल्य समझें, उन्हें स्मरण रखें, और उनका अनुसरण करें। TP

तैयार रहना

एक जवान व्यक्ति को उत्तरदायित्व दिया गया कि वह वाटिका को घास-फूस से मुक्त रखे। वह उसे दी गई इस चुनौती को निभाने में बहुत विश्वासयोग्य था। एक मित्र ने उसके साथ वाटिका का निरीक्षण करते हुए कहा, “मुझे प्रतीत होता है कि तुम इस वाटिका की देख-रेख ऐसे कर रहे हो मानो स्वामी कल लौट कर आने वाला है।” उस जवान ने उत्तर दिया, “अरे नहीं। मैं इस वाटिका की देख-रेख ऐसे कर रहा हूँ मानो स्वामी *आज ही* आ जाएगा।” उसकी कही बात संकेत करती है कि हम वाटिका को कैसे रखें, वरन हम प्रभु के आगमन के दृष्टिकोण से जीवन को कैसे रखें। क्या हम *अभी इसी पल उसके आगमन* के लिए तैयार हैं?

दूसरा थिस्सलुनीकियों मसीह के दूसरे आगमन को 1 थिस्सलुनीकियों से भिन्न दृष्टिकोण से देखता है। पौलुस की यह दूसरी पत्री दूसरे आगमन की चर्चा एक विश्राम, प्रतिफल, तथा स्मरण करवाने के लिए करती है। प्रथम अध्याय प्रोत्साहन है, दूसरा अध्याय स्पष्टीकरण है, और तीसरा अध्याय आग्रह है।

इस पत्री में बहुत कुछ प्रथम के साथ सामान्य है। पहले थिस्सलुनीकियों की विषय-वस्तु, “दूसरा आगमन” है। दूसरे थिस्सलुनीकियों की विषय-वस्तु, “धैर्य के साथ दूसरे आगमन की प्रतीक्षा है।” पौलुस ने यहाँ कहा, “यीशु आ रहा है, परन्तु तुरंत नहीं आ रहा है। उसके आने से पहले कुछ होना है। ‘पाप के पुरुष’ को पहले आना है।” यह पत्री अनुपम है क्योंकि यह “पाप के पुरुष” या “नियम-विरोधी पुरुष” का विस्तृत विवरण देती है। EC

समाप्ति नोट्स

[1]पोलीकार्प *ऐपिस्ल टू द फिलिप्पियन्स* 11.3, 4; आईरीनियस *अगेन्सट हेरेसीज़* 3.6.5; और क्लेमेन्ट ऑफ ऐलिकज़ैन्ड्रिया *स्ट्रोमेटा* 5.3. [2]*द एक्सपोज़िटर्स बाइबल कॉमेन्ट्री* में रॉबर्ट एल. थोमस, "2 थिस्सलोनियन्स," एड. फ्रैंक ई. गैबलिन (ग्रैंड रैपिड्स, मिशिगन : ज़ोन्डरवैन, 1978), 11:302. [3]इबिद., 303. [4]रेमण्ड सी. केल्सी, *द लेटर्स ऑफ पॉल टू द थिस्सलोनियन्स,* द लिविंग वर्ड कॉमेन्ट्री, वोल. 13 (ऑस्टिन, टेक्स. : आर. बी. स्वीट को., 1968), 134 से अनुकूलित.